

द्वादशोऽध्यायः
स्त्रीधर्मवर्णनम्
स्त्रीधर्म का वर्णन

ब्रह्मोवाच

व्रीहीणां कोद्रवाणां च सारधर्ममुदारकः। कङ्कुकोद्रवयोर्ज्ञेयो वरटः पञ्चभागकः॥ १॥
पञ्चभागान्प्रियङ्गूनां शालीनां च त्रयोऽष्ट च। चणकानां तृतीयांशः समक्षुण्णं त्रयं विदुः॥ २॥
पानीययवगोधूमं पिष्टधान्यचतुष्टयम्। तुल्यमेवावगन्तव्यं मुद्गा माषास्तिला यवाः॥ ३॥
पञ्चभागादिका घृष्टा गोधूमाः सक्तवस्तथा। कुल्माषाः पिष्टमांसं च सम्यग्धादिकं भवेत्॥ ४॥
सिद्धं तदेव द्विगुणं पुत्राको यावकस्तथा। कङ्कुकोद्रवयोरन्नं चणकोदारकस्य च॥ ५॥
द्विगुणं चीनकानां च व्रीहीणां च चतुर्गुणम्। शालेः पञ्चगुणं विद्यात्पुराणे त्वतिरिच्यते॥ ६॥
क्रियापाकविशेषास्तु वृद्धिरेवोपदिश्यते। निमित्तस्य वरान्नस्य तद्वृद्धिर्द्विगुणा भवेत्॥ ७॥

ब्रह्मदेव कहते हैं— व्रीहिधान्य तथा कोदों का चावल कूटे जाने पर आधा भाग तो तात्त्विक होता है, जबकि आधी भूसी निकल जाती है। काकुन तथा कोदो के पंचम भाग को परट कहते हैं। प्रियंगु धान्य का पंचम भाग कम होता है, शाली का तीसरा भाग तथा आठवाँ भाग कम हो जाता है। चने का तृतीयांश कम हो जाता है। ऐसा कहा गया है। ये तीनों अन्न कूटने के योग्य होते हैं। सिंघाड़ा, ज्वार, गेहूँ तथा पीसे हुये चारों अन्नों को पकाने पर जरन एक समान ही होती है। मूँग, उड़द, तिल, जौ में जरन एक ही बराबर जाती है। गेहूँ तथा सतू पीसने पर पंचम भाग निकल जाता है। कुत्थी तथा पिष्ट मांस अच्छी तरह पीसे जाने पर आधे से अधिक निकल जाता है। लेकिन ये दोनों पदार्थ पकाने पर द्विगुण हो जाते हैं। पुत्राक तथा यावक में भी यही होता है। काकुन तथा कोदों के अन्न में चना तथा उदारक अन्न पकाने से दूना हो जाता है। चीनक तथा व्रीहि (चावल) पकाने पर चौगुना तथा साठी पाँच गुना हो जाता है। ये यदि पुराने हों तब और भी बढ़ते हैं। पाकक्रिया के ज्ञाता तो इससे भी अधिक वृद्धि का वर्णन कर गये हैं। वे शुद्ध श्रेष्ठ अन्न को द्विगुण कर देते हैं॥१-७॥

तस्माद्भूयो विरूढस्य चतुर्भागो विवर्धते। लाजा धानाः कलायाश्च भृष्टाद्विगुणवृद्धयः॥ ८॥
भ्रष्टव्यानामतोऽन्येषां पञ्चभागोऽधिको मतः। चापकानां च पिष्टानां पादहीनाः कलायजाः॥ ९॥
मुद्गमाषमसूराणामर्धपादावरोभवेत्। क्लिन्नशुष्कवरान्नानां हानिर्वृद्धिर्विशिष्यते॥ १०॥
तथार्धेन तु शोऽध्यानाभाढक्या मुद्गमाषयोः। मसूराणां च जानीयात्क्षयं पञ्चमभागकम्॥ ११॥

जो अंकुरित अन्न हैं, उनका चतुर्थांश बढ़ता है। लावा, धान तथा कलायज भूजे (भूने) जाते हैं, तब द्विगुण हो जाते हैं। जब अन्न भूजे जाते हैं तब उनका पंचम भाग अधिक माना जाता है। चापक तथा पीसे अन्न के कलायज चौथाई कम हो जाते हैं। मूँग, उड़द, मसूर का आठवाँ भाग कम हो जाता है। विशेष गीले तथा विशेष शुष्क श्रेष्ठ अन्नों की न्यूनता अथवा वृद्धि इस नियम से अधिक अथवा कम भी हो सकती है। जो मूँग, मसूर अधिक साफ नहीं रहते, उनको साफ करने पर पंचम भाग की न्यूनता आती है॥८-११॥

षड्भागेनातसीतैलं सिद्धार्थककपित्थयोः। तथा निम्बकदम्बादौ विद्यात्पञ्चमभागकम्॥ १२॥
तिलेद्भुदीमधूकानां नक्तमालकुसुम्भयोः। जानीयात्पादकं तैलं खलमन्यत्प्रचक्षते॥ १३॥
क्षेत्रकालक्रियादिभ्यः क्षयादेर्व्यभिचारतः। प्रत्यक्षीकृत्य तान्सम्यगनुमित्यावधारयेत्॥ १४॥
क्षीरदोषे गवां प्रस्थं महिर्षीणां च सर्पिषः। पादाधिकमजावीनामुत्पादं तद्विदो विदुः॥ १५॥

असली बीज से तेल छठा भाग निकलता है। सरसों, कैथा, नीम तथा कदम्ब का पाँचवाँ भाग न्यून होता है। तिल, ईगुदी, महुआ, करञ्ज, उसम्मा में एक चौथाई तैल रहता है। खली का लक्षण अन्यत्र कहा गया है। खेत के भेद, समय, निकालने की प्रक्रिया से इस नियम में कुछ बदलाव आता है। जो कहा गया है, उससे अधिकता अथवा न्यूनता आती है। उनको स्वयं लगभग देखकर (खेत समय तथा तेल निकालने की विधि को देखकर) मात्रा घटा-बढ़ाकर जान ले। सोलह सेर गोदुग्ध में एक सेर घृत होता है, लेकिन गुण-दोषादि से प्रभावित होने के कारण निश्चित मात्रा नहीं कही जा सकती। भैंस, बकरी तथा भेड़ के दुग्ध में अधिक घृत निकलता है। अर्थात् १६ सेर दुग्ध में सवासेर से अधिक तक घृत निकल आता है। यह उनके ज्ञाता कहते हैं॥ १२-१५॥

सुभूमितृणकालेभ्यो वृद्धिर्वा क्षीरसर्पिषाम्। अतस्तेषां विधातव्यो ह्यर्थादेव विनिश्चयः॥ १६॥
प्रत्यक्षीकृत्य यत्नेन पक्षमासान्तरे तथा। पयोर्वृत्तैर्गवादीनां कुर्यात्सम्भवनिरणयम्॥ १७॥
कार्पासकृमिकोशौमौर्णकक्षौमादिकर्तनम्। कुणिपङ्ग्वन्धयोषाभिर्विधवाभिश्च कारयेत्॥ १८॥
बालवृद्धान्धकार्पण्ये यत्कर्त्तव्यमवश्यतः। विनियोगं नयेत्सर्वं प्रियोपग्रहपूर्वकम्॥ १९॥

अच्छी भूमि की घास के कारण समयानुसार दूध तथा घृत की मात्रा में वृद्धि होती है। अतः इन सब परिस्थितियों पर चिन्तन करके मात्रा का आभास प्राप्त करे। एक पक्ष अथवा एक माह तक खिलाने-पिलाने का उपाय करके तब दूध तथा घृतोत्पत्ति की मात्रा का ज्ञान करे। कपास, रेशम, सन के कीटों तथा उनको चुनने-काटने आदि का काम मूक, बधिर, लँगड़ी तथा विधवा स्त्रीगण से कराना-उचित है। बालक, वृद्ध, अन्धेदीन, लाचार लोगों को उनकी इच्छित वस्तु तथा भोजनादि देकर ये कार्य कराये॥ १६-१९॥

कर्मणामन्तरालेषु प्रोषिते चापि भर्तारि। स्वयं वै तदनुष्ठेयं नित्यानां चाविरोधतः॥ २०॥
शूद्राणां स्थूलसूक्ष्मत्वं बहुत्वं च व्ययाव्ययौ। मत्वा विशेषं कुर्वीत चेतनप्रतिपत्तिषु॥ २१॥
कारयेद्वस्त्रधान्यादि स्वाप्तवृद्धैरधिष्ठितम्। शूद्राणां क्षयवृद्ध्यादि मन्तव्यं वेतनानि च॥ २२॥
क्षौमकार्पासयोर्विद्यात्सूत्रं पञ्चमभागकम्। देशकालादिभागात्तु प्रत्यक्षादेव निर्णयः॥ २३॥

पति के विश्रामकाल में अथवा उसके प्रवासी होने पर पत्नी को चाहिये कि स्वयं सभी कार्य में सहयोग करे। शूद्रों (सेवकों) की स्थूलता, दुर्बलता तथा संख्या की अधिकता का विचार करके व्यय तथा संचय में विशेष चातुर्य प्राप्त करे। वस्त्र तथा अन्न के सम्बन्ध में घर के बड़े तथा अनुभव वाले लोगों के नियम का पालन करे। सेवकों की संख्या अधिक अथवा न्यून करने तथा वेतनादि के लिये अनुभवी वृद्धों से विमर्श करे। अलसी तथा कपास में पाँचवाँ भाग सूत होता है, तथापि इस नियम का निश्चय देश तथा काल के अनुसार ही हो॥ २०-२३॥

अवघातेन तूलस्य क्षयो विंशतिभागकः। छत्रां व्याप्तां तु वातेन तद्वर्णां प्रचक्षते॥ २४॥
पञ्चाशद्भागिकीं हानिं सूत्रे कुर्वीत लक्षणात्। वृद्धिस्तु मण्डसम्पर्कादशैकादशिका भवेत्॥ २५॥
श्लक्ष्णमध्यमसूत्राणामर्धाधिकसमं भवेत्। स्थूलानां तु पुनर्मूल्यात्पादोनं वालचेतनम्॥ २६॥
कर्मणो भूरिभेदत्वाद्देशकालप्रभेदतः। तद्विद्ध्य एव बोद्धव्यो वालचेतननिश्चयः॥ २७॥
स्थूलं दिनत्रयं देयं मध्यमं च त्रिरात्रिकम्। सूक्ष्ममापक्षतो मृष्टं मासात्तत्परिकर्मकम्॥

यदत्र क्षत्रवृद्ध्यादि तदुत्सर्गात्प्रदर्शितम्॥ २८॥

धुने जाने पर रुई का २०वाँ भाग क्षीण हो जाता है। यदि उत्तम ऊन को जो भेड़ आदि के होते हैं, उनको धुना जाये तथा यह धुनाई वायु से सुरक्षित स्थल पर की जाये तब वे भी २०वें भाग में कम हो जाते हैं। कपड़े की बुनाई के समय सूत का ५०वाँ भाग कम हो जाता है। यदि बुनते समय माड़ मिला दिया जाये तब १०वें अथवा ११वें भाग की वृद्धि हो जाती है। अत्यन्त महीन चिकने अथवा मध्यम प्रकार के सूत में उपरोक्त ५०वें भाग के आधे अथवा किंचित् अधिक की न्यूनता ही होगी, मोटे सूत में यह न्यूनता चौथाई ही होगी। यह सब परिमाण तो सूत कातने आदि वालों की निपुणता तथा अनिपुणता पर ही आधारित है। कार्य-भेद, देश, काल भेद के चलते अनुभवी लोगों से शिक्षा लेनी चाहिये जो इन कार्यों के विशेषज्ञ होते हैं। मोटे सूत का कपड़ा ३ दिन में, मध्यम कोटि के सूत का ३ रात्रि में तथा अतिसूक्ष्म एवं चिकने सूत का कपड़ा १५ दिन में कात कर बना देना चाहिये। इनमें जो कुछ कम-अधिक होता है, वह कहा जा चुका है॥२४-२८॥

कालकर्त्रादिभेदेन व्यभिचारोऽपि दृश्यते। शय्यासनान्यनेकानि कम्बलाश्चतुराश्रिकाः॥ २९॥
कम्बुकाश्चावकोषाश्च मध्या रक्ताश्च भूरिशः। गुरुबालादि वृद्धानामभ्यागतजनस्य च॥ ३०॥
भोगायानुगतो भर्ता कुर्याद्विविधमात्रकम्। यदस्य श्वशुरादीनां कल्पितं शयनादिकम्॥ ३१॥
भर्तुश्चैव विशेषेण तदन्येन न कारयेत्। वस्त्रं माल्यमलङ्कारं विधृतं देवरादिभिः॥ ३२॥
न धारयेत् चैतेषामाक्रमेच्छयनानि वा। पिण्याकनककुट्टाश्च कालरूक्षाणि यानि च॥ ३३॥
हेयं पर्युषिताद्यत्र गोभक्तेनोपयोजयेत्। कुलानां बहुधेनूनां गोध्यक्षव्रजजीविनाम्॥ ३४॥

काल तथा करने वाले की निपुणता अथवा अनिपुणता के चलते इस नियम में कुछ विभिन्नता लक्षित होती है। अर्थात् कहीं तो इस परिमाण से कम तो कहीं अधिक मात्रा में क्षय-वृद्धि लक्षित होती है। शय्या के अनेक आसन, कम्बल (जिस पर कम से कम ४ व्यक्ति बैठें), चावकोष ये मध्यम कोटि तथा अधिक लाल होते हैं। गुरुगण, बालक, वृद्ध, अतिथि की सुविधा एवं भोगार्थ परिवार की बहु विविध कार्य सम्पन्न करे। श्वसुर आदि वृद्धों की शय्या तथा विशेषतः पति की शय्या अन्य भृत्य, दास-दासी प्रभृति से बिछवाना उचित नहीं है। देवर आदि द्वारा उपभोग में लाये वस्त्र, माला, पुष्प, आभूषण को स्वयं धारण न करे। उनकी शय्या पर भी कभी चरण न रखे। खली, अन्न के टुकड़े, सूखे अन्न, बासी बचे अन्न को गौ आदि को प्रदान करने के लिये रखे। बड़े-बड़े सांडों के साथ चरने वाली अनेक गोगण के समूह हेतु उसे संरक्षित रखे॥२९-३४॥

किलाटगविकादीनां भक्तार्थमुपयोजनम्। दध्नः समाहरेत्सर्पिर्दुहेद्वत्सत्र पीडयेत्॥ ३५॥
वर्षाशरद्वसन्तेषु द्वौ कालावन्यदा सकृत्। तत्र वाप्युपयुञ्जीत श्ववराहादिपोषणे॥ ३६॥
पिण्याकक्लेदनार्थं वा विक्रेयं वा तदर्हयेत्। वृत्तिं धान्यहिरण्येन गोपादीनां प्रकल्पयेत्॥ ३७॥
ते हि क्षीरव्रता लोभादुपहन्युस्तदन्वयान्। दोहकालं गवां दोग्धानातिवर्तेत वै द्विजाः॥ ३८॥
प्रसरोदकयोर्गोपा मन्थकस्य च मन्थकाः। मासमेकं यथा स्तन्यं मासमेकं स्तनद्वयम्॥ ३९॥
सततं पाययेदूर्ध्वं स्तनमेकं स्तनद्वयम्। तिलपिष्टाभिः पिण्डाभिस्तृणेन लवणेन च॥

वारिणा च यथाकालं पुष्णीयादिति वत्सकान्॥ ४०॥

(मक्खन निकालने के पश्चात्) मथित मट्टे को भी उन्हीं गौओं के उपयोगार्थ रखे। दही से घृत निकाले। गौओं को यथाकाल दुहे परन्तु दोहनकाल में बछड़ों को पीड़ित न करे। गौओं को वर्षा, शरत्, वसन्त में दिन में दो बार दुहे। अन्य में केवल एक बार दोहन करे। मट्टे का उपयोग कुत्ते तथा शूकर आदि के पालनार्थ (उनके भोजनार्थ) करे। अथवा गौओं के लिये मट्टे को खली भिगोने के कार्य में लाये अथवा उसका विक्रय करे। गौओं को चराने वाले तथा गोपगण को अन्न अथवा सुवर्ण पारिश्रमिक के रूप में प्रदान करे। इसका कारण यह है कि पारिश्रमिक न पाने पर लोभ से अतिरिक्त दोहन द्वारा गौओं तथा बछड़ों को पीड़ित करते रहते हैं। इसलिये इन पर दृष्टि रखे तथा यथा समय गो-दोहन अवश्य करे अथवा कराये। हे द्विजवृन्द! उनको दुहने में निश्चित समय से विलम्ब नहीं करना चाहिये। गोपालक ही दूध में जल मिलाने वाले तथा दुग्ध-दधि मथने वाले होते हैं। गौ के बछड़ा जन्मने पर

एक मास तक उसे चारों स्तन का दूध पीने देना चाहिये। द्वितीय मास में दोनों स्तन का, फिर सर्वदा जब तक गौ उसे दूध पिलावे, एक स्तन का दूध पीने दे। तिल चूर्ण का पिण्ड, घास, नमक तथा जल समय-समय पर बछड़ों को देता रहे॥३५-४०॥

जरदगुर्गर्भिणी धेनुर्वत्सा वत्सतरी तथा। पञ्चानां समभागेन घासं यूथे प्रकल्पयेत्॥ ४१॥
एको गोपालकस्तस्य त्रयाणामथ वा द्वयम्। पञ्चानां वत्सकश्चैकः प्रवरास्तु पृथक्पृथक्॥ ४२॥
गोचरस्यानयनार्थं व्यालानां त्रासनाय च। घण्टाः कर्णेषु बध्नीयुः शोभारक्षार्थमेव च॥ ४३॥
पशव्ये व्यालनिर्मुक्ते देशे भूरितुणोदके। अभूततुष्टे वारण्ये सदा कुर्वीत गोकुलम्॥ ४४॥
सगुप्तमटवीवासं नित्यं कुर्यादजाविकम्। ऊर्णां वर्षे द्विरादद्याच्चैत्राश्वयुजमासयोः॥ ४५॥
यूथे वृषा दशैतासा चत्वारः पञ्च वा गवाम्। अश्वोष्ट्रमहिषाणां च यथा स्युः सुखसेविताः॥ ४६॥

वृद्धा गौ, गर्भिणी गौ, दुग्धवती गौ, बछड़े-बछिया, सद्योजात गौ— इनको समान भाग से घास प्रदान करे। गौओं के साथ एक अथवा दो गोपालक लगाये। उसमें गौओं के साथ ५ बछिया-बछड़े हों। उनमें जो (बछिया-बछड़े) बड़े हों उनको अलग करे। गोचर भूमि से गोशाला तक के मार्ग के लिये सर्पादि जीवों को भयभीत करने के लिये, गोगण की शोभावृद्धि के लिये तथा उनके रक्षणार्थ उनके गले में घण्टी बाँधे। सर्पादि दुष्ट जीवों से रहित, पशुओं के लिये लाभप्रद घास वाले चरागाह, चोरों से रहित (सुरक्षित) स्थान में, ग्राम्य में अथवा जंगल में गोगण के लिये दिन में चरने तथा बैठने का स्थान निश्चित करे। भेड़-बकड़ी का चरागाह सुरक्षित जंगली स्थानों में हो। चैत्र-आश्विन माह में भेड़ों का ऊन काटे। १० बकरियों अथवा भेड़ के समूह में एक नर बकरा अथवा भेड़ा हो। ५ अथवा ४ गौ के समूह में एक सांड हो। अश्व, ऊंट, तथा भैंस के समूह में जितने अधिक नर हों उतनी सुविधा रहेगी। इन सांडों का पालन विधिवत् करे॥४१-४६॥

विद्यात्कृषीवलादीनां योगं कृषिकर्मसु। भक्तवेतनलाभं च कर्मकालानुरूपतः॥ ४७॥
क्षेत्रकेदारवाटेषु भृत्यानां कर्म कुर्वताम्। खलेषु च विजानीयात्क्रियायोगं प्रतिक्षणम्॥ ४८॥
योग्यतातिशयं मत्वा कर्मयोगेषु कस्यचित्। ग्रासाच्छादशिरोभ्यङ्गैर्विशेषं तस्य कारयेत्॥ ४९॥
पद्मशाकादिवापानां कन्दबीजादिजन्मनाम्। सङ्ग्रहः सर्वबीजानां काले वापः सुभूमिषु॥ ५०॥

जहाँ कृषि कार्य हो, वहाँ कर्मकर्ताओं (खेतिहर-मजदूर) आदि के कार्य को सदैव देखे। कार्यानुसार वेतन तथा भोजनादि वितरित करे। तैयार फसल वाले खेत में, वाटिका में, हल के निकट, खलिहान में कार्यरत मजदूरों का जो कार्य हो रहा हो उस पर बराबर दृष्टि रखे। जो मजदूर लगन से अच्छा काम कर रहा हो, उसका विशेष ध्यान रखकर उसे भोजन, वस्त्र, शिर पर लगाने हेतु तेल आदि देकर अन्य कर्मचारियों से उसकी पहचान अलग रखे। पद्म, शाक, कन्द, मूल आदि के बीज को तथा अन्य गृहोपयोगी बीजों का अच्छा संग्रह समयानुसार रखे, ऋतु आसन्न हो जाने पर उन्हें बो देना चाहिये॥४७-५०॥

जातानां रक्षणं सम्यग्रक्षितानां च सङ्ग्रहः। तेषां च सङ्गृहीतानां यथावन्निपक्रिया॥ ५१॥
गृहमूलं स्त्रियश्चैव धान्यमूलो गृहाश्रमः। तस्माद्धान्येषु भक्तेषु न कुर्यान्मुक्तहस्तताम्॥ ५२॥
धान्यं तु सञ्चितं नित्यं मितो भक्तपरिव्ययः। न चात्रे मुक्तहस्तत्वं गृहिणीनां प्रशस्यते॥ ५३॥

जो फसल उत्पन्न हो जाये, उसका सम्यक् रक्षण करे तथा सुरक्षित रूप से अन्नादि का संग्रह करे। उनको बोने आदि की क्रिया सम्पन्न करे। गृह की मूलभूत तथा सब कुछ स्त्री होती है। गृहस्थाश्रम का मूलभूत है अन्न। अतः मुक्तहस्त होकर अन्नदान न करे। वह सर्वदा संचित रहे। भोजन पकाने में भी मितव्यय करे। मुक्तहस्त होकर अन्न को पकाने वाली गृहिणी की प्रशंसा नहीं की जाती॥५१-५३॥

अल्पमित्येव नावज्ञां चरेदन्नेषु वै द्विजाः। मधुवल्मीकयोर्वृद्धिं क्षयं दृष्ट्वा जनस्य च॥ ५४॥
ये केचिदिह निर्दिष्टा व्यापाराः पुरुषोचिताः। दम्पत्योरैक्यमास्थाय तद्धिदानप्रसङ्गतः॥ ५५॥

सन्त्येव पुरुषा लोके स्त्रीप्रधानाः सहस्रशः। तेषु तासां प्रयोक्तृत्वाददोष इति गृह्यताम्॥ ५६॥
 एवं योग्यतया युक्ता सौभाग्येनोद्यमेन च। सम्यगाराध्य भर्तारं तत्रैनं वशमानयेत्॥ ५७॥

॥ इति श्रीभविष्यमहापुराणे शतार्धसाहस्र्यां संहितायां ब्राह्मे पर्वणि
 स्त्रीधर्मवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

हे द्विजगण! अल्प अन्न की भी अवज्ञा न करे। इसकी वृद्धि के बारे में मधुमक्खी तथा चीटी के बिल पर संचित मिट्टी से सीखे। चीटी तनिक मिट्टी खोदते-खोदते बिल पर ढेर लगा देती है। मधुमक्खी तनिक-तनिक पराग लेकर मधुराशि एकत्रित कर लेती है। अन्न की कमी हेतु अंजन से शिक्षा ले। अंजन तनिक सा ही आँखों पर लगाया जाता है, शीघ्र ही उसका असर समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार अल्प-अल्प अन्न भी छोड़ देने से अथवा झूठी प्रशंसार्थ दे देने पर उसकी एक राशि (एक भाग) नष्ट हो जाती है। यहाँ कुछ ऐसे कार्य हैं जो पुरुषों के लायक हैं। उनका यहाँ सम्मिलित निर्देश दम्पति की अभेद्य एकता दर्शनार्थ किया है। सहस्रों ऐसे पुरुष हैं, जिनके लिये स्त्री प्रधान हैं। उनको प्रेरणा वे स्त्रियाँ ही देती हैं। यह कोई दोषपूर्ण व्यवहार कदापि नहीं है। सौभाग्य-योग्यता-उद्यम से स्त्री स्वामी की सेवा करके उसे वशीभूत करे॥ ५४-५७॥

॥ श्रीभविष्यमहापुराण के शतार्ध साहस्री नामक संहिता के ब्राह्मपर्व में
 स्त्रीधर्म का वर्णन नामक बारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १२ ॥

☆☆☆